International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 3, March- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

कजली का काल विभाजन

प्रो0 शिशिर कुमार पाण्डेय

शोध सारांशः

प्रस्तुत शोध पत्र में कजली के काल-विभाजन की विवेचना प्रामाणिक रूप से की गई है। कजली का उत्पत्ति काल लगभग 1000 ई0 माना जाये तो लगभग 650 वर्ष हो गये जब से कजली गीत गाये जाते हैं। समय के साथ इन गीतों में परिवर्तन और परिवर्धन होते रहे हैं। कजली गीतों की मौखिक परम्परा के कारण इन गीतों के रचयिताओं के नाम एवं जीवनवृत्त नहीं जाना जा सकता। कजली गीतों की रचना का काल विभाजन तीन अवधि में रखा गया है-प्राचीनकाल, मध्यकाल और आधुनिक काल।

मुख्य शब्दः कजली, काल-विभाजन, लोकगीत, लावनी, ख्याल, अखाड़े।

प्रस्तावनाः

यदि कजली का उत्पत्तिकाल लगभग 1000 ई० मान लिया जाय तो आज तक लगभग 650 से अधिक वर्ष हो गये जब से कजली गीत गाये जाते हैं। यदि कोई भाषाशैली एवं विषय की दृष्टि से कजली गीत के विकास-इतिहास को काल में विभाजित करना चाहे तो उसके सामने सबसे बड़ी कठिनाई यह होगी की अति प्राचीन काल के कजली गीत प्रायः अपना स्वरुप खो बैठे हैं। मुखानुश्रुत होने के कारण इन गीतों में परिवर्तन तथा परिवर्धन होते रहे और यह नहीं बताया जा सकता है कि ये गीत कब निर्मित हुए थे। इसी प्रकार मौखिक परम्परा के कारण इन गीतों के रचयिताओं के नाम एवं जीवनवृत्त नहीं जाने जा सकते। प्रेमघन जी ने लिखा है कि ये प्रचलित कजलियां कदाचित दो ढाई सौ वर्ष से पुरानी नहीं प्रतीत होती है। प्राचीन कजलियों के न मिलने से उनकी भाषा से कुछ भी सहायता नहीं मिलती है फिर भी जहां तक अनुमान किया जा सकता है लगभग सौ वर्ष से इनमें बहुत सुधार हुआ है।[i] प्रेमघन जी का उक्त कथन सन् 1913 का है। यदि वर्तमान कजली गीत उस समय कम से कम 200 वर्ष ही पुराने माने गये तो अनुमानतः इन गीतों की रचना सन् 1700 के आसपास हुई होगी। इसी प्रकार भारतेन्दु जी ने भी पुरानी कजलियों के कुछ उदाहरण अपनी पुस्तक हिन्दी भाषा में दिए हैं।[ii] भारतेन्दु जी की उक्त पुस्तक सन् 1890 में मुद्रित हुई है। निश्चय ही उसमें दी गयी पुरानी कजलियां सन् 1700 के आसपास की होगी।

इस प्रकार यदि उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर कजली गीतों की रचना का काल-विभाजन करें तो इनको तीन अवधि में रखना होगा-

प्राचीनकाल - सन् 1000 से 1700 ई० तक
मध्यकाल - सन् 1700 से 1900 ई० तक
आधुनिक काल - सन् 1900 से आज तक

प्राचीनकाल

प्राचीनकाल को अज्ञात काल भी कहा जा सकता है। आधुनिक काल में कोई कजली ऐसी नहीं मिलती है जिसको निश्चित रुप से 1700 ई० के पूर्व का कहा जा सके। साथ ही इसके पूर्व का कोई ऐसा कवि भी नहीं जाना जा सकता है जिसके जीवनवृत एवं उसकी कजली-रचना के बारे में प्रामाणिक रुप से कुछ कहा जा सके। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने पुरानी कजलियों का उदाहरण तो अवश्य दिया है परन्तु उनकी रचना का निश्चित काल एवं रचनाकार के बारे में कुछ नहीं लिखा है। [iii]

भारतेन्दु ने निम्नांकित कजली का उदाहरण प्राचीन कजली के रुप में दिया है-

पिय बिनु पीयर भइल्यूं रे जस अनार की कली ।।
दिल्ली के दरवजवां हो नथिया ऐंली बिकाए लोय।
जाय कहो मोरे बारे सैंया से नकिया छूछै बाय ।।

इसी प्रकार डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने अपने ग्रन्थ भोजपुरी ग्रामगीत भाग 2 में जिन कजलियों का संग्रह किया है उनमें कुछ कजलियां अवश्य ही प्राचीन काल की प्रतीत होती है। उदाहरण स्वरुप देखिए-

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 3, March- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

आरे बाबा बहेला पुरवैया, अब पिया मोरे सोवे ए हरी ।। टेक
कलियां चुनि चुनि सेजिया डसवली,
सइयां सुतेले आधि रात, देवर बड़े भोरे ए हरी ।। टेक
लंवग खिलि खिलि बिरवा लगवली
सइयां चाभेले आधि राति देवर बड़े भोरे ए हरी ।।[iv] टेक

मध्यकाल

सन् 1700 से 1900 ई० तक का काल कजली गीतों के विकास की दृष्टि से मध्यकाल कहा जा सकता है। इस काल में कजली का बहुत ही विकास हुआ। हिन्दी साहित्य के अनेक लब्धप्रतिष्ठ कवियों ने तथा विद्वानों ने कजली की रसज्ञता पहचानी एवं विभिन्न लयों में अनेक कजली गीतों की रचना की। कजली साहित्य का यह स्वर्णकाल था। बहुत-सी कजली की पुस्तकें मुद्रित हुई जिनकी रचना उस काल के हिन्दी साहित्य के महारथियों ने की। कजली के उद्भव विकास एवं ऐतिहासिक तथ्यों पर प्रकाश डाला गया है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, चौ० बदरीनारायण उपाध्याय ''प्रेमघन, किशोरीलील गोस्वामी एवं मनोहरदास रस्तोगी आदि ने कजली गीतों को साहित्यिक कोटि में स्थान दिया। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने मझोली नरेश महाराजाधिराज कुमारलाल खड्ग बहादुर मल्ल की कजलियों की बड़ी प्रशंसा की है तथा ''सुधाबिन्दु'' नामक पुस्तक में उनकी कजलियों को स्थान दिया है।[v] इसके अतिरिक्त मीरजापुर निवासी पं० वेणीराम तिवारी की कजलियों को तुलनात्मक रुप से अच्छा बतलाया है तथा उनकी निम्नोद्धत कजली को उदाहरण स्वरुप पाठकों के सम्मुख रखा है।[vi]

काहे मोरि सुधि बिसराए रे बिदेसिया।
तड़पि तड़पि दिन रैना गंवायों रे, काहे मोसे नेहिया लगाये रे बिदेसिया।
अपने तो कुबरी के प्रेम भुलाने रे, मोहे लिखि जोग पठाये रे बिदेसिया ।।
जिन सुख अधर अमी रस पाये रे, तिन विषपान कराए रे बिदेसिया ।।
कहें बेनीराम लगी प्रेम करारी रे उधो जी को ज्ञान भुलाये रे बिदेसिया ।।

स्वयं भारतेन्दु हरिश्चन्द्र कजली गीतों के रचनाकार थे। इनकी ''रेस बरसात'' एवं ''वर्षाविनोद'' नामक पुस्तकों में सुन्दर तथा रसमय कजलियां हैं। अनेक कजलियों में ऐतिहासिक घटनाओं का चित्रण करते हुए उन्होंने राष्ट्रीयता तथा देशप्रेम का जागरण किया है। इस प्रकार भारतेन्दु ने कजलियों का सर्वांगीण पुनरुत्थान किया। इसी काल में चौ० बदरीनारायण उपाध्याय प्रेमघन ने कजलीकादम्बिनी नामक पुस्तक की रचना की। इस पुस्तक का मुद्रण आनन्द कादम्बिनी यंत्रालय मीरजापुर में 1913 ई० में हुआ है। प्रेमघन जी की कजली इस प्रकार है-

आय कजरी के दिन नगीचान रंगाव: पिया लाल चुनरी ।।
रेसमी सबुज रंग अंगिया सिआव:
अंगि बैठि दरजिया की दुकान रंगाव: पिया लाल चुनरी।
लालै रंग अपनी पगरिया रंगाव:
होई रंगवौ से रंग के मिलान-रंगाव: पिया लाल चुनरी।
प्रेमघन पिया तरसाव: जिनि जिया,
आयल बाटै सजि सावन समान रंगाय: पिया लाल चुनरी।।[vii]

आधुनिक-काल

सन् 1900 ई० से आगे की अवधि को आधुनिक काल कहना उपयुक्त होगा। इसका मुख्य कारण यह है कि इस काल के आसपास से कजली क्षेत्र में एक नयी धारा प्रवाहित हुई। झूला तथा व्रतों एवं उत्सवों के अवसर पर गाई जाने वाली कजलियों की रचना में कुछ शिथिलता दिखाई पड़ने लगी। इसके विपरीत दंगलों में गायी जानेवाली

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 3, March- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

कजलियों की रचना बहुत अधिक संख्या में होने लगीं, साथ ही कजली के वर्ण्य-विषय में भी विविधता आ गयी। अखाड़ों में जय-पराजय की भावना से कजलियों का निर्माण होने लगा। कल्पना की नयी उड़ाने, अलंकृत भाषा, कलात्मक रुप, नये छन्द-विधान के साथ ही समाज की बहुमुखी सभ्यताओं को लेकर कजली का क्लेवर बदले दिया गया। बहुत कुछ सीमा तक यह भी कहा जा सकता है कि कजली-लोकगीत की स्वाभाविक मधुरिमा का अभाव हो गया परन्तु कवित्व की दृष्टि से अथवा भावव्यंजना की दृष्टि से कजली का बहुत विकास हुआ। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि छोटी कजलियों की रचना पूर्णरुप से अवरूद्ध हो गयी। लोकगायकों द्वारा छोटी छोटी कजलियों की भी रचना होती रही और उनका प्रकाशन भी होता रहा।

सबसे पहले उस समय मीरजापुर में कजली के चार अखाड़े स्थापित किए गये। ये चारों अखाड़े इस प्रकार थे 1. पं० शिवदास मालवीय का अखाड़ा 2. जहांगीर का अखाड़ा 3. बैरागी का अखाड़ा 4. अक्खड़ का अखाड़ा। इन अखाड़ों का विकास हुआ, संस्था की दृष्टि से भी और क्षेत्र की दृष्टि से भी। अब ये अखाड़े विभिन्न नामों से अन्य नगरों में भी फैल गए हैं। कलकत्ते तथा बम्बई में भी यहां के अखाड़ों की शाखा जा पहुँची। इसका यह अर्थ कदापि नहीं लगाया जा सकता कि आधुनिक काल में प्राचीन काल से चली आने वाली कजलियों का लोप हो गया।

इस काल में कजली गीतों का प्रकाशन भी बहुत अधिक संख्या में हुआ। इन प्रकाशित पुस्तकों में दंगलों में गायी जाने वाली कजलियों की संख्या नगण्य है। दंगलों में गायी जाने वाली कजलियों का विशाल भंडार पाण्डुलिपियों में अखाड़ेवालों के पास भरा पड़ा है। इन दंगली कजलियों में भी रस है, आकर्षण है, जीवंतता है।

उपसंहार

इस प्रकार कहा जा सकता है कि कजली में आने वाले ‘‘इसवली’’ खिलि खिलि’ तथा चाभेला आदि ऐसे शब्द हैं जो अवश्य प्राचीन है। यद्यपि इन शब्दों का प्रयोग अद्यावधि किया जाता है परन्तु कम मात्रा में। सब कुछ होते हुए भी हम इन कजली-गीतों का निश्चित काल नहीं स्थिर कर सकते हैं। अतः प्राचीन काल विशेष रुप से अज्ञात काल है जिसके बारे में बहुत कुछ नहीं लिखा जा सकता। स्पष्ट है कि कजली की भाषा पश्चिमी भोजपुरी है तथा इसमें लोकगीत का स्वाभाविक माधुर्य ओतप्रोत है। इसके अतिरिक्त इन्होंने उर्दू नागरी एवं व्रजभाषा में भी कजलियां लिखी है।

प्रेमघन जी ने कजरी-रचना के अतिरिक्त ‘‘अपनी कजली कुतूहल’’ नामक पुस्तक में कजली की व्याख्या भी की है। इन्होंने मीरजापुर में लगने वाले कजली के मेलों पर भी विस्तार से लिखा है।

मध्यकाल की कजलियों में ऐतिहासिक घटनाओं का चित्रण करते हुए राष्ट्रीयता तथा देशप्रेम का जागरण किया है। भारतेन्दु ने कजलियों का सर्वांगीण पुनरुत्थान किया। इसी काल में चौ० बदरीनारायण उपाध्याय प्रेमघन ने कजलीकादम्बिनी नामक पुस्तक की रचना की। इस पुस्तक का मुद्रण आनन्द कादम्बिनी यंत्रालय मीरजापुर में 1913 ई० में हुआ है। इसमें लगभग 150 कजलियां है। सभी कजलियों की रचना प्रेमघन जी ने स्वयं की है। अधिकांशतः श्रृंगारपरक तथा प्रकृतिवर्णनपरक कजलियां इसमें पायी जाती है। इसके अतिरिक्त देशभक्ति, समाजसेवा, हिन्दू-मुसलमान-संस्कृति, प्राचीन भारत की गौरव-गाथा, वर्ण-व्यवस्था, अंग्रेजीशासन के अत्याचारों का भी वर्णन है। प्रायः इनकी सभी कजलियां रसमय है तथा उनमें लोकगीत की स्वाभाविकता भी बनी हुई है। इनकी कजलियों की भाषा स्थानीय बोली के अधिक नजदीक है। इनकी कजलियों में एक विशेष बात यह पायी जाती है कि इन्होंने प्रायः कजली की जितनी धुने होती हैं उन सभी को अपनाया है। आधुनिक काल में कजली की पुस्तकों के लिए ठाकुर प्रसाद एंड संस, वाराणसी प्रकाशन के बहुत अधिक कार्य किया है। इसके अतिरिक्त हनुमानदास गया प्रसाद, गोरखपुर, दुर्गा-पुस्तक भण्डार, खेमाभाई, इलाहाबाद, बिन्देश्वरीप्रसाद, वाराणसी, गणेश एंड ब्रदर्स, वाराणसी, गुल्लूप्रसाद कालीदास, वाराणसी, सचदेव पुस्तकालय कलकत्ता, मैनेजर श्रीविद्यालय प्रेस तैलिनी पाड़ा (हुगली) मैनेजर दूधनाथ प्रेस, सलाकिया, हाबड़ा, एवं मीरजापुर के कई प्रेसों ने कजलियों की बहुत सी छोटी छोटी पुस्तकें प्रकाशित करने का स्तुत्य प्रयास किया है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 3, March- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939
(An open access scholarly, peer-reviewed, interdisciplinary, monthly, and fully refereed journal.)

संदर्भ ग्रन्थः

[i] कजली कुतूहल (कजली की कुछ व्याख्या), पृ० 28।
[ii] हिन्दी भाषा, पृ० 4।
[iii] हिन्दी भाषा, पृ० 4।
[iv] भो० ग्रा० गी० डा० कृष्णदेव उपाध्याय, पृ० 175।
[v] हिन्दी भाषा, पृ० 5।
[vi] हिन्दी भाषा, पृ० 5।
[vii] कजली काद०, पृ० 56/127।

पूर्व संकायाध्यक्ष
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान (मानित वि0वि0)
विशाल खंड 4, गोमती नगर, लखनऊ, (उ0प्र0) - 226010